लखलखा

रजनी शर्मा बस्तरिया

आज बकरियाँ, गाय चराते-चराते 'गोंदा' जंगलों में बहुत आगे निकल गई थी। सिर पर बांस की बनी बड़ी टोकनी जिसे स्थानीय भाषा में छतोड़ी कहा जाता है। हाथ में लाठी और होंठो पे कोई जशपुरिया लोक गीत। यह उसकी कुल स्वयं अर्जित की गई संपत्ति थी। जिसकी स्वामिनी बन वह आजाद परिदों के जैसे जशपुर के जंगलों में अपनी बादशाहत चलाती थी। बीस वर्षीया, गठीला शरीर, बस्तर शिल्प सी नाक, गोदने के टप्पे, देहाती वेशभूषा।

सरगी के वृक्षों के पीछे जब सूरज छिपता था तो उसे भान हो जाता था कि अब उसके वापस लौटने का समय हो चुका है। अब तो गांव में फसल कटाई का बखत पास आ पहुंचा था। गन्ने के समय, गन्ने के खेत, धान के समय धान की खेतों में मजुरी कर नमक, तेल, जुगाड़ हेतु 'गोंदा' व उसके जैसे हजारों जशपुरिया जाने कितने वर्षों से जुटे रहते थे।

दूर-दूर तक फैले खेत उन पर जब धान की पकी बालियाँ 'लोर' (झुक) जाती थी तो ऐसा लगता था मानो धरती की साड़ी पर विधाता ने सुनहरे मुकेश का काम कर दिया हो। महुआ जब पक कर गद-बद गिरता तो मानो पूरा जंगल ही जशपुरिया नृत्य पे ताल देता हो। सरगी, शीशम के पत्तों की घने बाँस के साथ जुगलबंदी शहनाई को भी फीकी कर दे ऐसी धुन...। गाँव में जब धान की बालियों के पकने का समय पास आता था तो पूरा गाँव उत्सव के मुड में आ जाता था। धान कटेगी, बिकेगी, घर में हाँडी भर भात और पर्याप्त नमक की कमी वर्ष भर नही होगी। साथ ही कच्चे महुए का साथ तो क्या कहना ?

भोले, जिंदादिल, खुशमिजाज आदिवासियों की यह जीवन शैली कितनी मस्त, निर्वाध प्रकृति के गोद में न जाने कितनी सदियों से चली आ रही है, फल-फूल रहे थे है। अब गाँव गाँव के शहरीकरण ने अदरक की तरह पैर पसारने शुरू कर दिये थे। सड़कों पर अब फर्राटा फटफटी (बाईक), ट्रक, मोटेल (मोटर) धडल्ले से धूल उड़ाती चलती जाती थी। गांव की बुधरी, कोइली जाने कहां गायब हो गई अब तक उनका सुराग नहीं मिल पाया।

महुआ जब पकता तो गोंदा व गोंदा की अनेक सहेलियां जंगल से इकट्ठा कर बड़े से गप्पे में रखती। इसकी खुशबु से ही पूरा गांव गमका करता था। पर आज जलजला आ गया। गांव के खेतों की ओर हाथियों का रेला बढ़ा चला जा रहा था। देखते-देखते कच्ची झोपड़ियां, फसल चौपट। हाहाकार मच चुका था। सारे सपनों की छोड़ो उन भूखी आँतों का क्या? कब,कैसे? इनमें अन्न जाएगा? पूरी रात गाँव की आंखों

ISSN:2583-8849

में दहशत, टूटा मनोबल, टूटी झोपड़ियाँ, गुहार लगाते तो किसके पास? अर्जी कौन सुनेगा उनकी।

दिन बीता, फिर साल।

कुछ ही माह बीते पुनः गन्ने की गमक से गाँव फिर महक रहा था। सरसराते पत्ते जाने कौन सा गीत गाये जा रहे थे। हर वर्ष की तरह गन्ने की सोई (रस निकालने के बाद बचा तना), गुड़ सब, गोंदा की आँखों में नाचने लगा। इस बार तो गुड़ बनने के बाद मिले पैसे से वह प्लास्टिक की चप्पल तो लेकर ही रहेगी। महुआ इकट्ठा करने जंगल में जाते वक्त उसके पैरों में छाले जो हो जाते थे। ऊपर से सूरज महराज की हुकुमत। पिछली घटना को गांव वाले नहीं भूल पाये थे। पर यह क्या? आज महुआ को गाँव के पास जंगल में 'जाता' (चक्की) जितने पाँव के निशान मिलते गये। हृदय की धड़कन तेज हो गयी। 'हे आँगा देव' जंगल के इतने पास आ गया। गजराज का दल? इस जंगल से उनकी गाँव की दूरी बस कुछ कोस थी।

गन्ने की फसल लहलहा रही थी। आने वाली बारिश से बचने 'छानी' (छप्परों) की मरम्मत भी हो चुकी थी। अचानक महुए से भरी टोकरी सिर पर उठाने ही वाली थी गोंदा कि हाथियों की चिंगाड़ ने उसे अनापेक्षित आशंका से भर दिया। अब समय नही था। सिर पर महुए की टोकरी ले गोंदा पीछे पलटी तो गजराज का पूरा झुंड आता दिखा। 'आया गो' (ओ माँ) ये राह तो सीधे गाँव की ओर जाती है। गोंदा बदहवास- पुनः गांव में तबाही का तांडव? क्षण भर में देर किये बिना वह दौड़ती गई। जंगल के आड़े तिरछे रास्तों पर। पत्तों के ऊपर चर्र-चर्र की आवाज, फिर महुए के टपकने की आवाज, फिर गदगद की आवाज। गोंदा बेतहाशा दौड़ती जा रही थी, रास्ते में महुआ बिखेरती। हाथियों का दल महुआ के खुशबू से उसकी ओर दौड़ते आ रहे थे। गोंदा आगे-आगे, पीछे हाथियों का दल....। महुए की गंध से उपजा लखलखा(क्लोरोफार्म) जैसी खुशबू से हाथी मस्त हो रहे थे। उन्हें तो महुए के गंध ने मस्त किया हुआ था।

गोंदा की सांस धौंकनी सी चली जा रही थी, धड़कन सरपट । कदमों में मानो पंख लग चुके थे। आगे-आगे महुआ की टोकनी लिये गोंदा पीछे महुए से उपजा लखलखा, फिर कतारों में गजराज। गोंदा पस्त हो चुकी थी। गजराज के रेले को गांव की ओर जाने से रोकने के लिये लखलखा के बिना ही वह सुदुर जंगल में वह अचेत हो चली थी।

डूबती आंखों से देखा धूल का गुबार, बगल में 'लखलखा' रिक्त टोकरी। हाँ वह गुबार अब दंतैले हाथियों का था जो गाँव से खेतों की ओर न जा कर परिवर्तित हो चले थे।

गोंदा बिना लखलखा के अचेत हो चली थी पर अवचेतन में गन्ने के साबुत खेतों की छबी ने उसके मूर्छित होते चेहरे पर संतोषासिक्त स्मित बिखेर दी थी। महुए से उपजे लखलखे का लाख अभार। मूर्छित गोंदा बुदबुदाये जा रही थी। लखलखा लाख लाख शुक्रिया।

116, सोनिया कुंज, देशबंधु प्रेस के सामने, रायपुर

 ISSN:2583-8849